[५०]

काया के इस वन्दीगृह मे
कब तक करूँ प्रतीक्षा तेरी ?
तडप तड़प कर प्रीति बावरी--
बन जाती आँसू की ढेरी ।

बाँधा तुमने मुझको निष्ठुर
क्यो फूलो की जञ्जीरो से ?
गा, गा, कर तुमने बेधा
मुझको किन प्रणय मञ्जीरो से ?

असफलता की इस बेला पर,
कब तक खडी रहे नौका ?
था कल्पित चन्द्रोदय मेरा
क्यो जीवन-निशि को रोका ?

उलझ गये तुम मुझे उठा कर,
किस ममता के घूँघट मे ?
बिखर पडी सिमटी इच्छाएँ--
प्रणयी के कोमल हठ मे !

मृत्यु के पहिले यदि आओ
तो न विवश सज्ञा होगी,
परिमाण खुली आँखो मे ही
चेतनता, युग, प्रज्ञा होगी--!

सारंग

दिनेशनन्दिनी डालमियां

१९४६-१९४७

✦

अब तक करती रही प्रतीक्षा,
अपनेपन की हुई समीक्षा,
कुण्ठित है शब्दो मे शिक्षा,
अन्तर मे होती बरसात।
तू पार हुआ अपनी मञ्जिल
मुझको रस्ते मे हुई रात।

दीपक नभ मे छिपे हुए है
गाने के स्वर भिपे हुए है,
नयन वारिधि से दिपे हुए है,
बँधा हुआ सूर्योदय प्रात,
तू पार हुआ अपनी मञ्जिल
मुझको रस्ते मे हुई रात!

जिनके जीवन के विषय मे जानकर
जो श्रद्धास्पद स्फुरण जागृत
हुई उन्ही पूज्य माताजी
(मेरी सास) को
सविनय

[१]

मै शयन की आरती हूँ
'शस्य' श्यामल भारती हूँ

रात आँसू मे पिघल कर आज मुझ मे मिल रही है
प्राण में तूफान है पर पिय सुखो की सारथी हूँ

मै शयन की आरती हूँ
विश्व-वन्दित भारती हूँ
साँझ के स्वप्ने झलकते प्रणय-बाती हिल रही है।
पाप मुझ मे डूबते मै पुन्य-तरि प्रिय तारती हूँ

मैं शयन की आरती हूँ
वीर सुन्दर भारती हूँ
संसार मे अब क्या रहा विश्वास के बल जी रही हूँ
प्रिय-चरण की धूरि मस्तक आज जीवन हारती हूँ
मै शयन की आरती हूँ
करुण कोमल भारती हूँ !
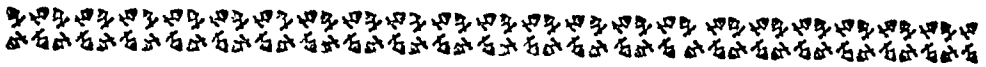
सकता है कि जगत की कँटकाकीर्ण भूमि की रहस्य-गलियो मे मेरी प्रेरणा की सॉस रूँधने से उसके स्वर रुआँसे हो गये हो ।

'मनुहार' लिखने के बाद कुछ ऐसी प्रतीति होने लगी थी कि अब मै अल्हाद के गीतो का ही सृजन करूँगी, पर अब ज्ञात होता है कि उस विश्वास की कोई हद भूमि नही थी । सम्भव है दूसरी बार दृढ सकल्प की शृखलाओ मे मनको कस कर ऐसा कर सकूँ । इन गीतो मे मैने कई अपूर्णताये देखी पर उन्हे ज्यो का त्यो रहने दिया—विशेष हेर फेर नही किया, कर नही सकी—तीव्र कल्पना के उस तल्लीन क्षण मे ही जब वे इस आकार मे आये तो तन्द्रा उतर जाने के बाद मै उन्हे कैसे समझती ? अत: जैसे ये है वैसे ही बाहर आये है फिर भी यह बात मै मानती हूँ कि 'सारग' के सुख दु ख हास, अश्रु निश्चय, अनिश्चय, विश्वास, अविश्वास केवल उस तक ही सीमित नही, ये उसी निकटता से औरो के भी है ।

६ अगस्त, '४७

'दिनेशनन्दिनी' डालमियां
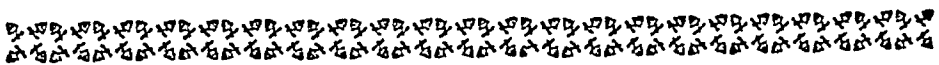
[३]

मत पूछो कैसे जीती हूँ—?

वर्षो से इस बन्दी-गृह मे,
अतिथि आ आ कर जाते है
विश्व-वेदी जीवन-तर्पण कर ;
स्मृति की भेट चढा जाते है !

कालान्तर हो गया अभी भी
फटे हृदय को ही सीती हूँ,
पूछो मत कैसे जीती हूँ ?

कलुषित पाप पुन्य के बन्धन,
इच्छा मे सञ्चित अपनापन,
आदेश नही समझी हूँ विधि का—,
इसीलिये सहती युग-कम्पन !

सान्ध्य-अर्घ्य देता है साकी,
प्यास प्रणय की ही पीती हूँ।
पूछो मत कैसे जीती हूँ ?
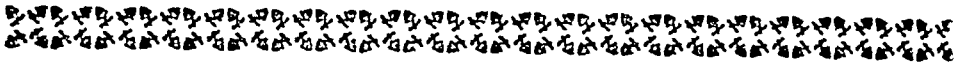
[२]

मुक्त करो मत मुझको तो बन्धन ही प्यारा ,
परवाना प्रिय दीप-शिखा पर जीवन हारा ।
झुलस गये साजन पर मेरे उड़ न सकेंगे ,
चल आए इतना जो पथ अब मुड़ न सकेंगे !

अर्पण की शुभ बेला है संघर्ष न आए ,
मेरे मन मे कटुता विष अवसाद न छाए ,
ज्योतिर्मय का आकर्षण युग युग ही जलना ,
प्राण टूटते पथ निर्मम फ़िर भी है चलना !

सुख सञ्चित रहने दो मै पीड़ा से खेली--
बन्द करो सब द्वार छोड़ दो मुझे अकेली !
मुक्त हवा मे बन्दी आहें कब मिल पाई ?
मन की दुबिधा मरने पर कब बाहर आई !

रश्मि शृंखला तोडो मत यह मेरी ममता
मेरा संयम कहता है निशि दिन में समता !
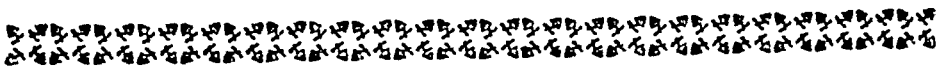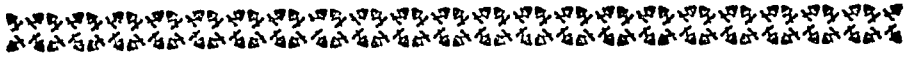
[४]

मुझसे पहले ही कहते यह प्यार नही सपना है,
चाँदी के टुकड़ों का विनिमय कौन यहाँ अपना है–?
जाते जाते समझाते हो 'प्राण तौल से चलना
मिलन मर्म का मधुर व्यग बाकी कर्मो की छलना'
मिथ्या माया का प्रकार प्रेयसि मन की विह्वलता
सञ्चित कर बिखरा बल तेरा तज सारी निर्बलता !

मृत्यु झूलती मदिर पैग मे मुझको रात बिताना
रिक्त मोह की मञ्जूषा ममता मद यही लुटाना
हिली जडे ढह गई दिवारे कवि कल्पित मन्दिर की
कौन करे अब रखवाली भी इस जूने खण्डहर की
मुझसे पहिले ही कहते 'हम तुम' विधि का अफसाना
घड़ी एक का मिलन प्रेयसि बाकी है पछताना !
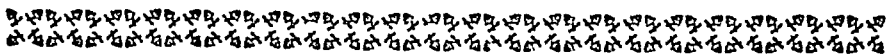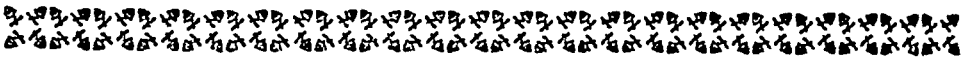
अनुभूति क्षणों की क्षमता लेकर
भी अब प्राण नही सह सकते ;
व्यथा डूब जाती अर्णव मे
फिर भी बोल नही कह सकते !

बूँद बूँद करुणा-घट भरता--
अपनी आँखो में रीती हूँ !
पूछो मत कैसे जीती हूँ ?
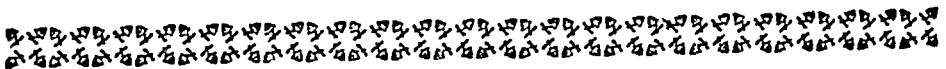
छल कपट जगत के जञ्जालो से
सहसा ही वह छूट गई।
निर्धनता ममता की बेड़ी
भी जर्जर हो टूट गई।
अपने वैभव से रूठ गई!

घोर यातना मन ही मन मे,
आत्म-दमन कर सहती थी।
दुस्सह आशा के सपनों की--
भीड शून्य से कहती थी
कैसी उलझन मे रहती थी!

मौत सिरहाने आ बैठी पर
तब भी प्राण अकेला था
अगणित कल्मषो की गिनती
मानव हारो से खेला था।
किसने उसे सकेला था?

दुख का ही अवकाश मिला था
रुदन भरे थे स्वर के स्वर
मधुर शब्द वह कब सुन पाई
उनमन मनुहारों मे ज्वर
सोया था जीवन-निर्झर
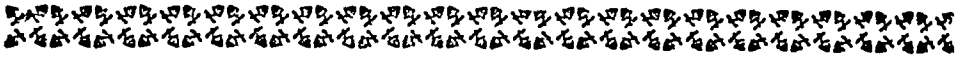
[५]

बरस चुकी अब क्या बरसेगी ?
मूक बनी प्रतिपल तरसेगी !
सूचित कर आगम बेला भी नही आवेगे—
मधुर उलहने अश्रुपात सुन रुक जावेगे ।

कठिन नियति मन मे हर्षेगी
आँखें प्रतिपल ही तरसेगी !
व्यर्थ जायगा मान अनिश्चय की घड़ियों में—
मूर्छित होगे प्राण प्रतीक्षा की कड़ियों मे ,

दुःख की हरियाली सरसैगी
मूक बनी प्रतिपल तरसैगी !
अस्त व्यस्त श्रृंगार मिलन के साज सलौने
स्वप्न-रहित निद्रा में निशि के राज अलौने

कल्पित चरणों को परसेगी ,
मूक बनी प्रतिपल तरसेगी !
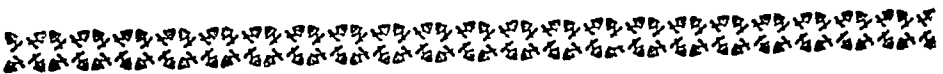
[८]

मै अपने मन की रानी हूँ !

मेघों मे गुम्फित शोलों का
बिदाई के अस्फुट बोलो का
बँधा हुआ हूँ ज्वार निवेदन के नयनो का पानी हूँ !
मै अपने मन की रानी हूँ !

कौन पूछता मेरा परिचय
मुझ मे विश्व-बधू का सचय
साहस का शोणित पीती पर पिय की नादानी हूँ !
मै अपने मन की रानी हूँ !

क्यो करते हो मुझे समर्पण—?
दुनिया के पापो का दर्पण
तम की ओट रही जीवन भर फिर भी जानी मानी हूँ !
मै अपने मन की रानी हूँ !

बादल बन मन मोर नचाती
अपने ही पथ पर छा जाती ;
विश्वासों के बल पर जीती संशय आनाकानी हूँ !
मै अपने मन की रानी हूँ !
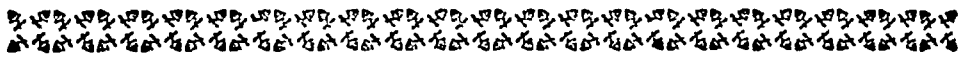
उड़ गया अचानक मन-तुरङ्ग !
परियों का स्वच्छन्द प्राण,
पुष्पों के उर का मृदु अनङ्ग,
नाट्यशिखा यौवन निर्जन की—
रात चाँदनी पिय स्पन्दन की,
मेघों के विप्लव गर्जन की,
तोड सभी बेसुर तारो को
जाग उठी जीवन मृदङ्ग !

कौन हस्ति जो उसे मनावे—?
पद पद नर्तन भर कर लावे,
फूलों की जञ्जीर लगावे,
खोल द्वार मेरे मधुवन का
गया नाद - लोभी कुरङ्ग ।
प्यासा था, कब से प्यासा ?
आशा से की उसने आशा
शब्दों ने सीखी परिभाषा
मूक प्राणों मे पीड़ा भर
उड़ गया अचानक मन-तुरङ्ग !
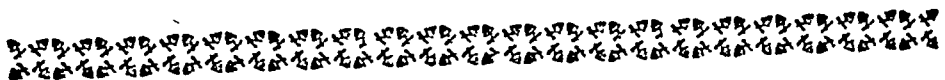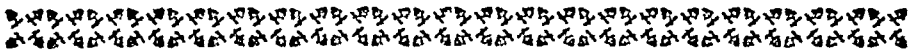
[६]

प्रिय कब अवगुण्ठन खोलोगे ?
नैनो मे निद्रा लहराती
प्रणय-शिखा अचल फहराती,
वाणी व्रीडा मे छिप जाती
मुझ मे होकर नही बोलोगे ?
सखियो ने शृङ्गार कराया,

श्वेत-पुष्प पर्यंक सजाया,
रजत थाल दीपक रखवाया,
प्रेम सुधा पी कब डोलोगे ?
प्रिय कब अवगुण्ठन खोलोगे ?

बीत रही उजियाली राते
मधुर मलय भोली सी बाते
अभिलाषा उर्मिल सघाते
निशि-गन्धा पर कब सो लोगे ?
प्रिय कब अवगुण्ठन खोलोगे ?

अर्घ्य लिये मै खड़ी हुई हूँ,
स्वप्न अनागत अडी हुई हूँ।
तव चिन्तन मे पडी हुई हूँ,
कब सुहाग-कुकम घोलोगे ?
प्रिय कब अवगुण्ठन खोलोगे ?
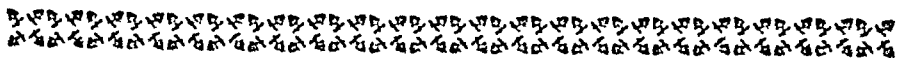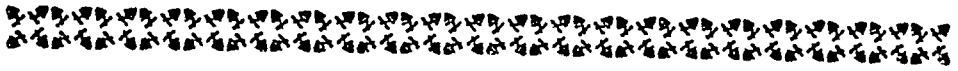
मुक्त-प्राण का समुचित दर्शन ,
संसृति का हूँ चक्र सुदर्शन ,
सृष्टि के विह्वल उर की मैं भूली हुई कहानी हूँ !
मै अपने मन की रानी हूँ !

नक्षत्रों की ज्योति चुराती ,
वे मुझमें उनमें छिप जाती ,
युग-अनुकम्पा सहज हास पर मैं बे मोल बिकानी हूँ !
मैं अपने मन की रानी हूँ !

प्यार नहीं यौवन का छल हूँ
उनकी निर्बलता का बल हूँ—
मङ्गल-घट की ममता मदिरा मान मुग्ध मेहमानी हूँ !
मै अपने मन की रानी हूँ !

मेरा कब कोई बन पाया
अब तक था किसको अपनाया—
उनकी छलना मे भी मै ही बन कर सत्य समानी हूँ !
मै अपने मन की रानी हूँ !
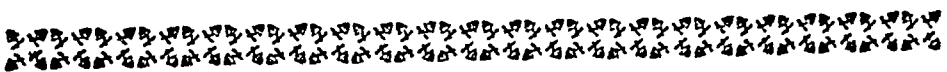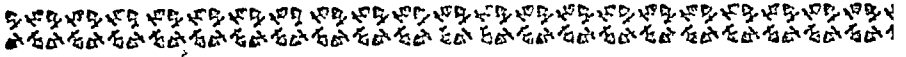
[११]

राही मुझसे प्यार न कर !
अपना जीवन उपहार न कर !
मुझ मे लहराते अथक सिन्धु,
अमल धवल नीहार-बिन्दु ,
अब तू भी मेरी चाह न कर—
यह बन्द किला है राह न कर ?

तेरे अरमानो की टोली,
जल जायेगी बुझती होली ,
शिशु स्वप्नो ने आँखे खोली;
रगा जग विस्मय की रोली ,
साथी जीवन बर्बाद न कर
यह रूखा सा सवाद न कर !

मत बहका तू अपनी आशा,
भूली भूली सी परिभाषा ,
क्या समझेगा उखडी भाषा
व्यर्थ ही तोडेगा गाँसा
सम्हल मेरा अरमान न कर—
उजड़े दिल का फर्मान न कर
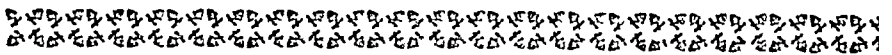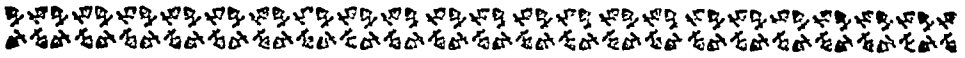
[१०]

मै किये विश्वास बैठी ही रही प्रिय आयँगे
बादलों की आड़ से ही तनिक तो मुस्कायँगे,
नि.शब्द है दीवार छाया-चित्र सारे मिट गये !
पथिक कूचों से निकल कर अपने अपने घर गये

सोचती थी साँझ पड़ते ही हृदय-धन आँयगे
सो गये मेरे मनोरथ देख कर पछताँयगे
आगमन घड़ियाँ बिलख कर अब रुआँसी हो गई
मिलन के उल्लास मे कैसी उदासी रो गई !

समझ थी परिहास के अन्तिम चरण तक आँयगे
मलिन छाया सी मुझे लख धूप मे मुर्झायँगे
समय के उच्छ्वास से लो आरती भी बुझ गई
शान्त अब तक थी शिरायें आज रण मे झुँझ गई

सच किये विश्वास बैठी ही रही वे आयँगे
काकली की कूक सुन वे तड़प कर रह जायँगे
काल की उस पृष्ठभूमि पर प्रतिज्ञा चित हुई
तरुण भव की तूलिका रंगहीन संज्ञाहत हुई !
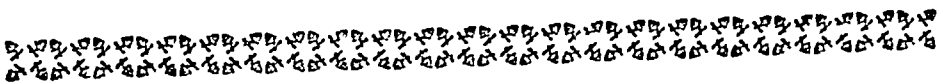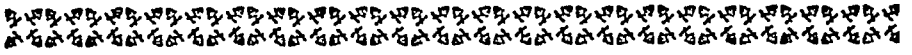
[१२]

सजन पूछते है मै आली घूँघट मे शर्माती क्यो हूँ ?
गरल समझ उनका प्रीति घट, घट मे ही घुल जाती क्यो हूँ ;
जब वे छूते छुई मुई सी छिन छिन मे मुर्झाती क्यो हूँ ,
सजन पूछते मुझसे आली छाया से घबराती क्यो हूँ ?

— २ —

पुष्पो की शैया पर सोकर कल्पित अग्नि शरोसे डरती ,
अपने जीवन मे समरस हूँ फिर भी पीर पराई मरती ,
निश्चय-तट पर कर्म-तरि है पर मै स्वप्न तूफनी भरती ,
पुन्य-शिखा बुझ गई पराभव-पुलको से जल जाती क्यो हूँ ?

— ३ —

कनक-कलश मादक-मदिरा का पथ मे ही ढुलकाती क्यो हूँ ?
रूप-निशा पी साकी बे सुध मै पीछे हट जाती क्यो हूँ ,
विशद् विश्व भुज आलिङ्गन मे बँध कर मिटती जाती क्यो हूँ ,
सजन पूछते यही सखी मै घूंघट मे शर्माती क्यो हूँ ?

— ४ —

विधि के स्वर की अवहेला कर अपने गीत सुनाती क्यो हूँ—
अर्क खीच कर चॉद-सितारे पृथ्वी से टकराती क्यो हूँ ,
हँसती है मानवता मुझ मे फिर भी अश्रु बहाती क्यो हूँ ,
मेरा मन सुन्दर मूरत शिव-पूजा पुष्प चढाती क्यो हूँ !
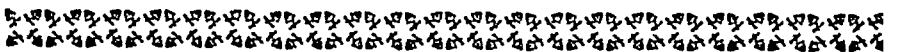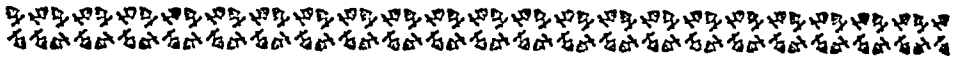
सुन ले पर विश्वास न कर
जलते रवि से हिम 'आस' न कर
मेरे उर मे मधुमास छिपे
रुदन वेदना हास दिये
उलझी स्मिति में बास न कर
छिपे छिपे ही रास न कर !

राही मुझसे प्यार न कर
मधुर निठुर व्यवहार न कर
मेरी आँखों का थकित ज्वार
स्पष्ट है, लखता क्यों उस पार ?
तू भी मेरी चाह न कर
यह बन्द किला है राह न कर !
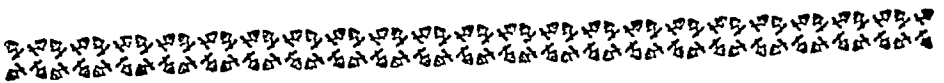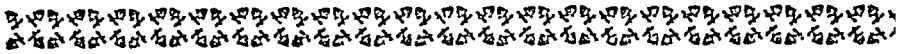
[१४]

वह पथ जिस पर न चला कोई !
अश्रु जो बाहर कब आया ?
शब्द जिसे कब दुहराया—
समझा जग जिसको अनलराशि,
पीकर उसको न जला कोई !

अन्धकार के अनुक्षण मे,
लज्जा के निशा निवारण मे,
आकृष्ट प्रश्न प्रेमाञ्जलि के—
मधु क्षण मे भी न फ़ला कोई,
वह पथ जिस पर न चला कोई !

खण्डित मन्दिर हूँ, मूर्ति नही,
कवि पक्ति जिसकी पूर्ति नही—
प्रस्तर प्राणो मे मधुरस भर
शशि घूँघट मे न पला कोई
वह पथ जिस पर न चला कोई !
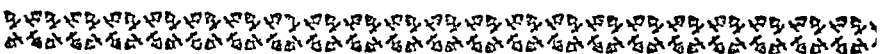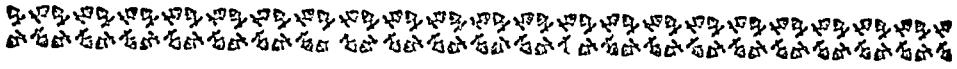
[१३]

क्यों लगाई आग नूतन मैं सतत् ही जल रही थी,
रोक दी क्यों राह खो कर सह-पथिक भी चल रही थी,
उरस्थ-प्रतिभा कर वशीकृत वल्लरी सी फल रही थी,
प्राण-वशी मे छिपी पुरदर्द सपने दल रही थी!

— २ —

मधुर कम्पित कामना की वासना मनु सी पुरानी,
श्वेत श्रम-कण पी रही जो घुट रही जग की जवानी,
क्या कहूँ संदिग्ध मेरे स्पन्दनों की सम कहानी,
पीर की छाया सुनहरी बन गई जीवन-निशानी!

— ३ —

तब प्रतिभ सी वेदना भी हूक बन सदेह आई,
रवि-किरण प्रस्तार था मन पर घटा घनघोर छाई,
दीप का निर्वाण था मानव-बधूटी भी कराही,
पाप की पीड़ा भरी यह आँख बेकल छलछलाई!
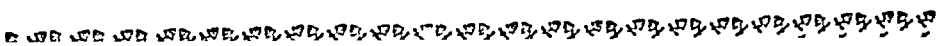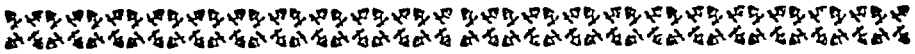
[१५]

अस्पष्ट अक मेरे अन्तर के
तुम न कभी भी पढ़ पाओगे
आँखों मे रात बिताने से
क्या नभ तारो को गिन जाओगे ?

पद चिह्न मिटा कर शैशव के
परित्यक्त प्राण में बहते हो
अपनेपन की ही मरीचिका
मुग्ध-प्रणय क्यों कहते हो ?

प्राणो का उत्फुल्ल चाँद
बिखराता परिमल के कण
आग्नेय हृदय का आकर्षण
निमिष निमिष यह सम्मोहन

स्वप्नराशि में वही इसीसे
मन को ही चितचोर कहूँ ?
मानवता के बूढे क्षण मे
किसको अपनी ओर कहूँ ?
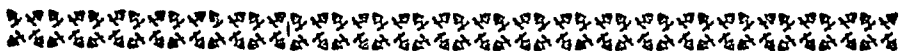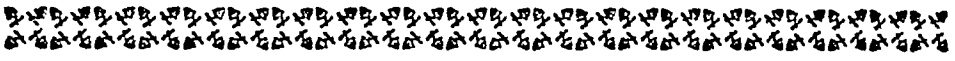
वह मस्जिद जिसका द्वार बन्द
अनुभूति बिना कब बना छन्द ?
उत्कट प्रतिभा-पावक लेकर—
हिम बूँदों से न गला कोई
वह पथ जिस पर न चला कोई !

सत चेतन हूँ, समाधि नहीं,
दुसह्य अन्त हूँ, आदि नहीं,
अभिव्यक्ति-सिन्धु-सुधियाँ लेकर
दुर्दिन विधि से न टला कोई
पथ हूँ जिस पर न चला कोई

वह पानी जिसकी प्यास नहीं,
विह्वल स्पन्दन उल्लास नहीं,
समझा जग जिसको अनलराशि—
पीकर उसको न जला कोई।
पथ हूँ जिस पर न चला कोई ?

[१७]
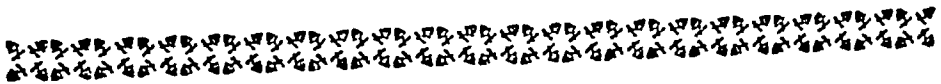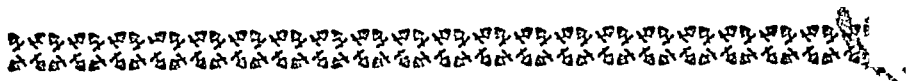
मै तुझसे मिलने आई।
फूलों का श्रृंगार किये,
अन्तर मे चिर झकार लिये,
जीवन से छिपने आई;
मै तुझसे मिलने आई !

स्वर्ण-पात्र मदिरा लाई,
आड़ तमालो की आई,
स्वप्नो पर निद्रा छाई,
विकल वेणु सुनने आई;
मै तुझसे मिलने आई !

स्वप्न लिये साकी आई,
पथ पर पुष्प बिछा आई,
सम-दुखी छाया छाई,
श्रुति मे कुछ कहने आई—
मै तुझसे मिलने आई !

आ आ कर फिर लौट गई
सूने अन्तर की चोट सही,
अपने मधु की ओट रही,
तुझ मे ही खिलने आई,
पिय तुझसे मिलने आई।
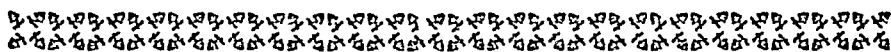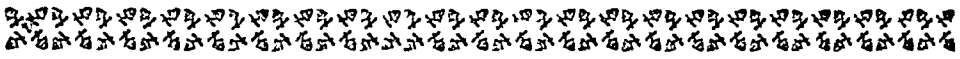
क्यो सूना सूना लगता है
सहसा मुझ म क्या जगता है ?
काया सोई जी भगता है
वही मुझे भी ठगता है
मैं रोती रहती हूँ प्रतिपल क्यों जीवन का अभिसार किया ?
गुप्त-प्रणय विषय-वासना क्या कल्पित अधिकार दिया ?
अपना कोष लुटाया मैने,
फिर भी क्या सुख पाया मैने ?
पर के को अपनाया मैने--
सोया सर्प जगाया मैने ।
निर्धन हूँ निर्धनता मे सुख, फिर भी धन का लोभ हुआ
आधा-पथ चल गई अकेली प्यासी हूँ तब क्षोभ हुआ
मुझको न कभी कोई समझा
ठिठकी सुन रुक जा रुक जा
हूँ स्वतत्र किसका कबजा
सतत् कहा मत जा मत जा
आतुरता इतनी थी फिर क्यो भार हुई हूँ ?
अपने ही जीवन का अब अभिसार हुई हूँ !
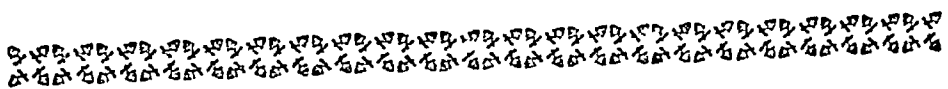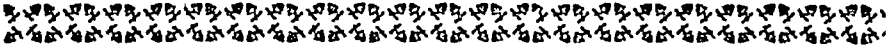
मुकुल के आवृत मुख सा
अवगुण्ठित अन्तर सुख सा
मुग्ध-प्रणय की बातो सा
धुली हुई बरसातो सा
सजल कौमार्य भी वैसा
अँधेरे का कम्पन जैसा !

शैशव उर में शिशु स्पन्दन सा
चिर-बसन्त नन्दन वन सा
भाग्य के कोमल कर सा
नव पल्लव के मर्मर सा
भय का पहला कम्पन कैसा ?
अँधेरे का मन्थन जैसा !
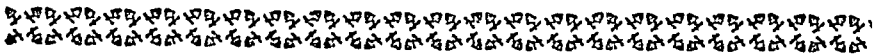
[१८]

अँधेरे का कम्पन कैसा ?

प्रलय की शिथिल उसासो सा
मौन की मधुमय तानो सा
सान्ध्य जीवन की वेला सा
नित्य पर आज नवेला सा
नियति का कलरव कैसा ?
अँधेरे का स्पन्दन जैसा !

ध्वनिहीन लजीली शबनम सा
कुटिल कुन्तलों के तम सा
प्राणों के रस निर्झर सा
झिंगुर के अस्फुट स्वर सा
प्रेम पुरस्कृत भी वैसा
अँधेरे का कम्पन जैसा !
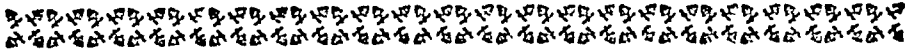
[२०]

कोकिल कूक उठी मधुवन मे,
अवधि बीत गई, प्रिय आए इस पतझड़ जीवन मे !
गात हुए भय विह्वल सारे, पुलक पुलक पर रत्न सवारे,
इस ऊसर निस्तल भूमि पर छूट रहे रस के फौव्वारे ।
कोकिल कूक उठी कानन मे,
थकित प्रतीक्षा, तड़प उठी मेरी आशा निर्जन मे !
कठिन यातना सह कर भी, प्राणो को रही सजोये,
पूर्व स्वप्न मे जो कुछ पाया नयन निरन्तर रोये ।
कोकिल कूक उठी मधुवन मे,
स्वागत शब्द अधर पर रुकता परिवर्तित यौवन मे !
यह सन्धी की बेला साकी मेरी प्यास उन्हे दे
अब तक जो कुछ मैंने खोया, कुछ आभास उन्हे दे !
कोकिल कूक उठी मधुवन मे,
अवधि बीती तब आये इस पतझड़ जीवन में !
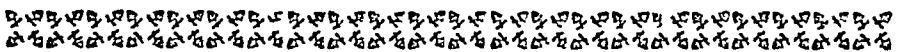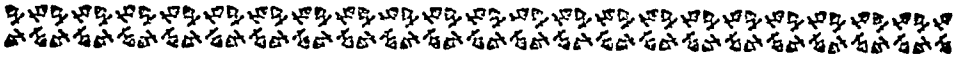
साज सजाये परिणय के
पर मुझको तो उत्साह नही ।
पिय आराधन ही अभीष्ट
परिणामों की परवाह नही ।
नित जलती पर दाह नही
सम वेदन की चाह नही !

निरपेक्ष भाव से पूजा कर,
अपनी माया से मुक्त हुई।
एकाग्र ध्यान के निर्णय से—
दर्शन इच्छा निर्लिप्त हुई !
मन शक्ति आक्रान्त हुई !
निर्विकार पर भ्रान्ति हुई !

कष्ट सहन करके भी मैंने
शुभाशीस को ठुकराई।
चिर पीड़ा की परम्परा
ही मेरे उर को भाई !
अपनी भूलो पर पछताई !
कब मैं उन्हें जान पाई ?
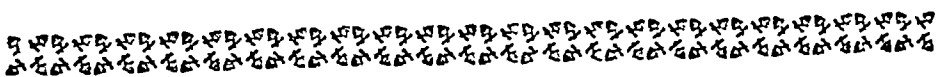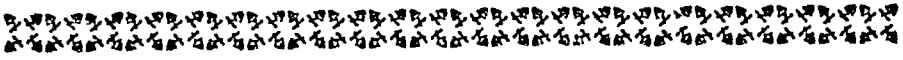
अखिल सृष्टि आर्द्रतारा
के तरलता दीप सी मैं,
उद्भव जगत के इंगितों पर
'इला' की धूप सी मैं,

अञ्जलि में घुल रही थी,
ओस के धूमिल कणों सी,
मुग्ध मेरी मृतक आशा
सो गई अब साँस दफना--
कह न पाई प्यार अपना !
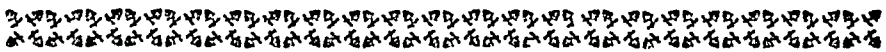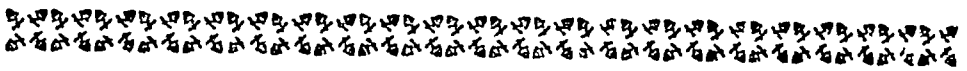
[२१]

कह न पाई प्यार अपना !

मूक ही मैं चल रही थी

मूक ही था पथ हमारा,

पाश मे पीड़ा सशकित

सर झुकाये चल रही थी--

मूर्छना के अधर पर ले

निठुर की कल्पित कहानी

जुगुप्सा के अंध-क्षण में

हो गया है भार सपना !

कह न पाई प्यार अपना !

प्रणय-वञ्चित ही रही

प्रतिदान पिय को दे न पाई;

नित्य तृष्णा थी चिरन्तन

तृप्त उसको कर न पाई,

निर्वेद सा परिचय रहा,

विश्राम सी चिन्तित बिदाई---

झुर रही थी रात काली

लख शिशिर मे प्रात कपना

कह न पाई प्यार अपना !
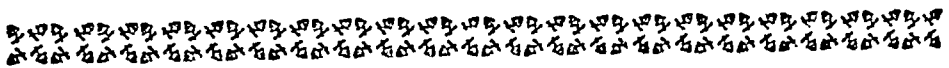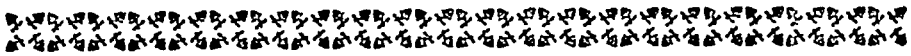
[२३]

छोड़ दूँगी ऐ बटोही आज तेरी बाँह—

मैं न चाहे चल सकूँ रो दे अकेली छाँह,

हास चाहे रूठ जाये पर रहेगी आह,

तोड़ दूँगी शक्ति से सारे प्रणय के तार,

सहम कर रह जायगी मन की प्रलय हुकार !

मै हलाहल पी रही देने अमी का दान

वरदान वर्जित है मुझे जग क्यो न हो अभिमान

रहेगी चेतना सर्वत्र मेरे प्रेम से अनजान

गन्ध ईर्षा में लिपट बेहोश होगे प्राण !

पुरुष इच्छा, कल्पना, सकल्प नारी पूर्ति

शेष सपनों सी सजग विश्वास सत की मूर्ति,

फोड़ दूँगी आज शीशे की महल दीवार

सह चुकी हूँ जन्म भर कटु विषम जड़ व्यवहार,

पी गई हूँ पथ के बिखरे सभी उल्लास,

और जग की वासना के काँपते इतिहास,

तोड़ दूँगी कर्म-रेखा के सभी अवतस,

और भव की जालियो मे गुँथ रहे जो कंस

साज सारे मिल गये अब चीन्ह लूँगी राह

छोड़ कर भी ऐ बटोही आज तेरी बाँह !
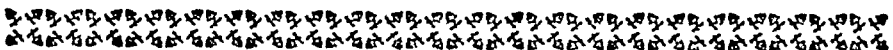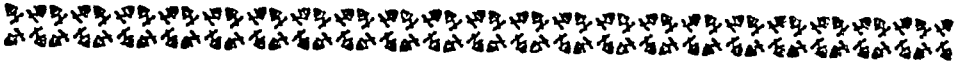
[२२]

प्रेम चलो उस देश जहाँ दिन मे भी दीपक जलता हो !
खोया रूठा अपना साथी सहसा ही पथ में मिलता हो
दुख सुख की जीवन सीमाएँ कट जाएँ चलते चलते ही
रूप अरूप सभी विभ्रम मिट जाये चलते चलते ही ।

मधुर गान सुन मानव के टूटे कम्पित मृदु प्राण जुड़े,
साकार कल्पना के पंछी नन्दन वन मे निरद्वन्द उड़े ।
राहें हों पुष्पों सज्जित मन मे सौरभ के शुभ्र जाल,
रात न बीते आँखों मे कभी क्यों मुर्झाये वरमाल ?

धन धान्य पूर्ण रस पृथ्वी पर भूख-नंग का नाम न हो
पुन्य महा कितने थोड़े, पापी है यह बदनाम न हो,
स्तन पीता नन्हा शिशु सुन्दर अप-मृत्यु का ग्रास न हो
सत्य शिवं सृष्टि ग्रह मे विद्रोही खग्रास न हो ।

अज्ञान न हो इतना अन्धा जो छाया के पीछे दौड़े
पावनता की परिभाषा कर अपनी ही प्रतिमा तोड़े ।
पूज्य पुजारी भिन्न नही पूजा की आँखमिचौनी हो
अनहोनी, विस्मय, लज्जा केवल होनी ही होनी हो ।

बहुरूपी परिधानों से मानव न कभी मानव छलता हो
चल प्रेमी उस देश जहाँ दिन मे भी दीपक जलता हो !
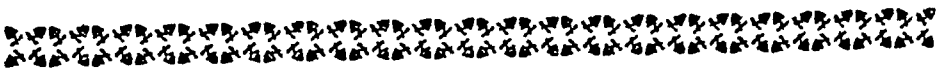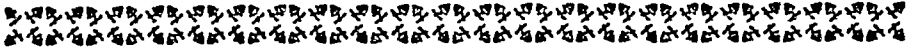
[२५]

माया ममता तागा तोड़ा
रो रो कर मैंने घर छोड़ा

सखियों ने समझाया मुझको
पथ अपना दिखलाया मुझको
स्मित करके शर्माया मुझको
हल्दी तैल चढाया मुझको

मेरा अञ्चल उनसे जोडा
रो रो कर मैंने घर छोडा

दही दूध मधु से नहलाया
अग' अंग पर रत्न सजाया
पात पुष्प सेहरा बँधवाया
मेरे जी मे कब जी आया

मुझको ले उनका मन दौडा
रो रो कर मैंने घर छोड़ा

उनके आसन पर बैठाया
कुकुम मोती माँग भराया
लज्जित पथ दे सप्तपदी के
माॅ ने पूजा अर्घ्य चढ़ाया
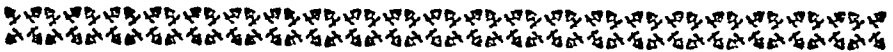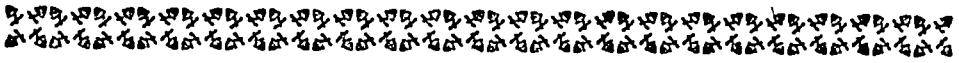
[२४]

आ गई घर आज अपने आ गई
पुष्प धूरि उड़ कँगूरे छा गई
सो रही अब तक जो थी सुख की घड़ी
आज सर पर चढ़ जवानी गा गई
आ गई घर आज अपने आ गई !

देख तारक दीप जलते है यहाँ—
शिथिल मन के भाव भी खिलते यहाँ,
शाम होने भी न पाई झुटपुटी
मदिर नयनो मे खुमारी छा गई
आ गई घर आज अपने आ गई !

जन्म से ही ये मेरे है आत्म-जन
प्रेम से कुछ पूछते पर तप्त-मन,
द्वार बन्दनवार पथ बिखरे सुमन,
हेरती थी आज वो जग पा गई
आ गई घर आज अपने आ गई !

नव-वधूटी आज घूँघट मे हँसी
पिय-हृदय मे या वही उनमे बसी
देख री सब साज स्वागत आ गए
गान-मंगल और खुशियाँ छा गई
आ गई घर आज अपने आ गई !
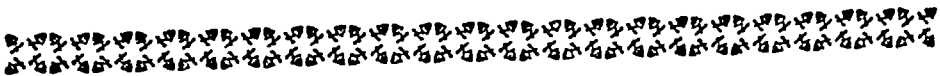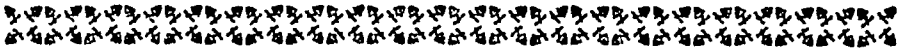
[२६]

क्या है मेरा जो त्याग करूँ ?
जग की आँधी तूफान हरूँ

मेरे गाने अवसाद भरे,
सुख दूर गहन दुखवाद खरे,
लोह श्रृंखला के प्रहरे,

फिर किस पर अभिमान करूँ ?
प्रिय क्या है जिसका त्याग करूँ ?

रुकती जिह्वा मेरा कहते,
प्राण निठुर विधि से डरते,
मेरे भ्रम ही बाधा करते,
बन्धन पर बन्धन अड़ते

अपने खूं का फाग करूँ
मुझ पर क्या जो त्याग करूँ ?

ले लो जो कुछ दान किया,
मैंने कब इन्कार किया ?
तृणवत् साधन परिहार किया,
था जिसका लौटाल दिया।
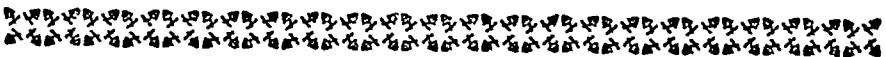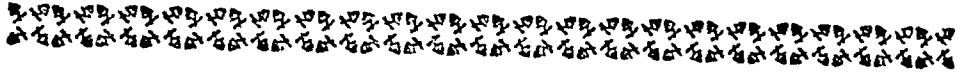
मुस्काये थे तब वे थोड़ा
रो रो कर मैंने घर छोड़ा

परिणय विधि से होम कराया
दोनो को कुछ मत्र पढाया
वर निरीक्षण की बेला थी
पर मैंने कब नेत्र उठाया?

मूक रही उनका मन मोड़ा
रो रो कर मैंने घर छोडा

जीवन-रथ मुझको बिठलाया,
जग बार बार आँखे भर लाया
मूर्छित होने के कुछ पहिले
स्वयं बिदा ने अंक लगाया

चला तभी सुन्दर वर घोड़ा
रो रो कर मैंने घर छोड़ा!
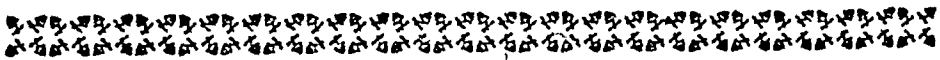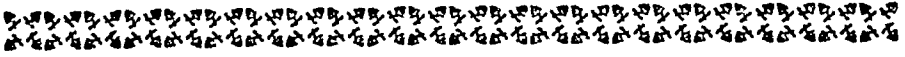
सुनोगे मेरे मन की बात ?
मिलन आँसू भीगी सौगात,
चाँदनी प्राय. अँधेरी रात
मुर्झाते खिलते जलजात--
मन मेरा दुख भरी बात !

भारी मस्तक, उर भी भारी
घनघोर घटा छाई कारी
कुण्ठित यौवन करुणा सारी
कहूँ क्या विपदा की मारी
गुप्त अभिशापों की बरसात
मेरा मन दुख भरी बात !

प्रियतम बहुत दिनों के बाद,
उमडा प्राणो मे अवसाद,
मधुर तेरे वचनों की याद,
प्यार था या कोरा परमाद,
सुनोगे मेरे भी पश्चात ?
मेरा मन दुख भरी बात !
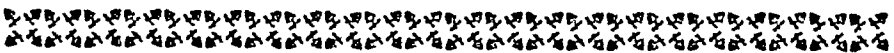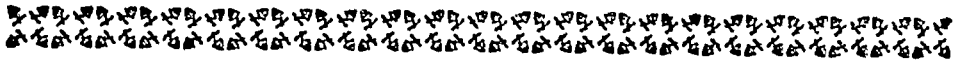
विधि वेदन वैराग करूँ
मेरा क्या जो त्याग करूँ ?

(क्या) भोगों से परिचय मेरा ?
मैंने तो सयम ही हेरा।
चला चली सूना डेरा,
बँधा सर पर कटक सेहरा।

अब किससे अनुराग करूँ
मेरा क्या जो त्याग करूँ ?

अपना समझी वह दूर रहा,
जनम जनम परिताप सहा,
सताप सिमट चुपचाप रहा
ग्रथित अपरिचित हाथ गहा,

जल-समाधि सन्यास धरूँ
क्या कहते मेरा त्याग करूँ ?
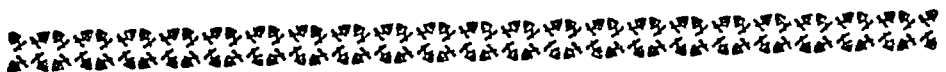
[२८]

मिलन कहाँ अब इस जीवन मे ?

मेरे पातक का प्रायश्चित,
होगा ही अन्तर मे निश्चित—
चाहे कह दूँ हूँ मै अपरिचित
निर्णय होगा ही मरतन मे !
मिलन नही अब इस जीवन मे !

कितनी हूँ मै आज अकिञ्चन
या न कभी था वह मेरा धन
राग नही धडकन है रोदन,
व्यर्थ खोजती रस विषकण मे,
मिलन नही अब इस जीवन मे !

मुक्ति के किस आकर्षण मे,
भावों की लघुता के क्षण मे,
मेरी शक्ति के अर्णव मे—
मूर्छित यौवन के बन्धन मे,
मिलन कहाँ अब इस जीवन मे ?
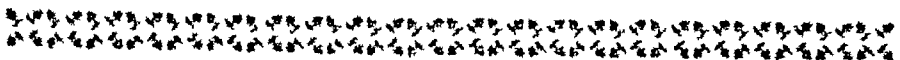
छाया भय भूखा कंकाल
प्रातः कहाँ सम सायंकाल,
मेरी ममता का जञ्जाल,
सान्ध्य यौवन कितना विकराल,
स्वप्न-परिणय या सत् संघात—
मेरा मन दुख भरी बात !

हूँ द्वन्द्व विश्व का युग बन्धन,
मेरा उर केवल तव स्पन्दन,
अनिश्चित सा कैसा क्रन्दन,
मेरे मन का ही यह मन्थन
किश्त हुई, लो अन्तिम मात—
मेरा मन दुःख भरी बात !
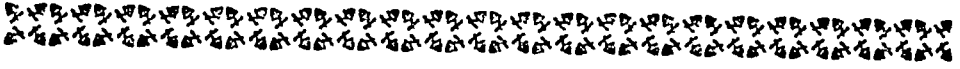
[२६]

मैने अब तक क्या क्या खोया ?

मेघों की आँखमिचौनी मे मेरे भव का गर्जन सोया
कृत्रिम खुशियाँ बिजली कड़की, खुली थी जीवन की खिडकी
अभि व्यञ्जन आभा कछार, सिसक सिसक कर मन रोया,
मैंने अब तक क्या क्या खोया ?

प्रारम्भिक यौवन के छल से, नियति हृदय के धन-कौशल से
अञ्चल मे बुझते प्रदीप को कितनी बार सँजोया
मैंने अब तक क्या क्या खोया ?

कुन्दन प्राचीरों से बँधकर, जग रूढ़ी घूँघट से सधकर,
प्रज्ञा के वैषम्य स्वप्न को प्राण-सुधा से धोया,
मैंने अब तक क्या क्या खोया ?

प्रणयी की प्राचीन कथा में, मिल बिछुडन की आत्मव्यथा में,
गंगा-यमुना के सङ्गम पर अपना चीर भिगोया,
मैंने अब तक क्या क्या खोया ?
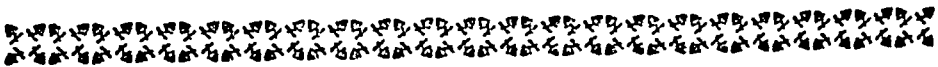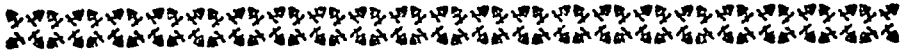
[३३]

सजन आये है सखि कूच का सामान कर दे।
हाथ मे मेह्दी रचा मोतियो से मॉग भर दे।

फल गई मेरी प्रतीक्षा,
चतुर उठ शृंगार कर दे।
वृद्ध अपने हाथ से ही——
तरुण सुख विश्वास भर दे!

भूल मे अब तक रहे जो
आज आये है बुलाने,
भूल मत जाना कही तू
मूक ही सब साज कर दे!

फूल की वीणा न दे तू
मै न कुछ भी गा सकूँगी——
पिय-मिलन के मधुर क्षण मे
मधुरिमा ही ला सकूँगी!
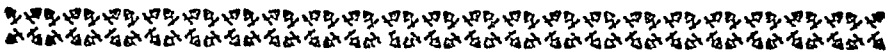
[३१]

यह कैसी है प्रीति तुम्हारी ?
अपराधी छाया से डरते ,
प्रेत-ग्रहों के पीछे मरते,
पल पल मे ही प्राण उमडते—
हिमशोले मेरा पथ भरते,
फिर भी हूँ हम-राह तुम्हारी !
पर कैसी यह प्रीति तुम्हारी ?
किसकी क्षमायाचना करते—?
पाप-घटक मे अमृत भरते ,
ममता के ही फूल बिखरते
आँखों मे घनश्याम उमडते !
उलटी ही सब रीति तुम्हारी—
यह कैसी है प्रीति तुम्हारी ?
घूँघट मे ही रूप निखरते,
पीड़ा के शिखरों पर चढते ,
उठते उठते फिर गिर पड़ते,
थकित निशा तरुओ से झडते
जीवन-सरिता ज्वार उमडते
फिर भी हूँ हम-राह तुम्हारी
यह कैसी है प्रीति तुम्हारी ?
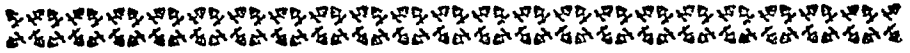
[३४]

सुख से ले लूँ आज बिदा—

निर्बाध रहे आकर्षण का क्षण,
दुर्निवार गीतो का लक्षण,
अनुभूति चरणो मे अर्पण मेरे प्राणो की प्रमदा—
सुख से ले लूँ आज बिदा !

यह अभिलाषा का परिवर्तन,
कल्पित इच्छाओ का मधु-तन,
निर्झर मुक्ति मे लय होगे उसके राग सदा !
सुख से ले लूँ आज बिदा !

रहे प्रेम भी ऑखे फेरे,
निर्दय चिन्ता छाया हेरे,
दु ख की निठुराई मे अकित मेरे प्राणो की प्रमदा
सुख से ले लूँ आज बिदा !

निरर्थक है ममता की रेख
भूल के चरणो का उल्लेख,
जन्म जन्म से सहती आई हूँ सन्ध्या विपदा—
दु ख से ले लूँ आज बिदा !
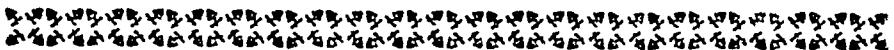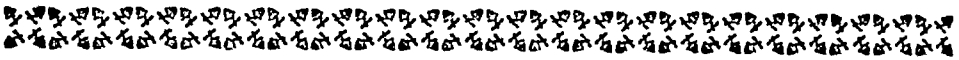
आशा का शतरंगी अम्बर अपने मे ही मतवाली हूँ।
पीड़ा का प्राचीन खिलौना अपने ही मन की आली हूँ।
नखतों की टूटी डाली हूँ
ऊषा की अन्तिम लाली हूँ!

मृत्यु का जड़ चेतन बन्धन उजड़े घर की घर वाली हूँ,
कुण्ठित प्राणों की पुकार पी शस्त्रहीन लड़ने वाली हूँ!
श्याम-दीप की उजियाली हूँ
मै उन चरणों की लाली हूँ!
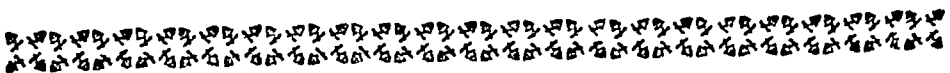
[३६]

तुम न मुझको प्यार करते
'आजकल' मे युग बिखरते !

शारदी घूँघट सरकते ऑखो मे सितारे
नभ-तरी को तोड़ निशि को अन्धकर, तूफान भरते !
तुम न मुझको प्यार करते—
रूप से मोती निखरते !

शान्त नीरवता तपोवन तापसी श्यामा जगाई—
वासना की बेलि कम्पित स्वेद मे शोले उमडते ?
तुम न मुझको प्यार करते
'आजकल' मे युग बिखरते !

प्यार का उनमन उलहना प्यास ने रह रह पुकारा
जान कब पाई जवानी व्यग है चढते उतरते—!
तुम न मुझको प्यार करते
प्राण-पापी क्यो सिहरते !
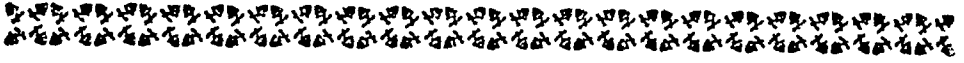
सिसकती है व्यर्थ ही तू
यह मेरे वरदान का दिन
कर बिदा हँसकर मुझे अब—
हर घड़ी उल्लास की गिन !

पाप कितने पुन्य भारी खोल अनुसन्धान कर दे
सजन आये है चतुर उठ कूच का सामान कर दे !

भय-विकम्पित हृदय-सुर मे
स्पष्ट तेरा सुन रही हूँ,
अश्रु पश्चाताप यह क्यो—?
श्री सुमन-पथ चुन रही हूँ

अर्थहीन ममता की बाते
नीरस तेरा यह आलिङ्गन
अरि बिगाड़ मत रोकर मेरे—
प्रथम प्यार का पुलकित क्षण !

भाल पर कुकुम लगा कर श्रीफलो से गोद भर दे
सजन आये है चतुर उठ कूच का सामान कर दे !
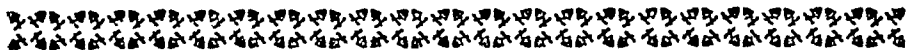
[३८]

अल्हड़ भोली अपरिचित थी
चुरा लिया मेरा बचपन !
तितली सी उड़ती थी पलपल
कब हुआ किसी से अपनापन ?

स्तब्ध हुई मेरी किलकारी
जीती हूँ या अब भी हारी—?
हुए साकी वे श्री सम्पन्न
लेकर मेरा ही शिशुपन !

स्वप्न सी लगती है वह बात
दिया उनके कर मे जब हाथ ,
कम्पित रोम रोम अज्ञात
बेदी के धूएँ की रात !

होम-शिखा सी उज्ज्वल देह
क्या सुख मे अब भी सन्देह ?
उनमन थे फिर भी प्रसन्न
लेकर मेरा ही शिशुपन !

[३५]
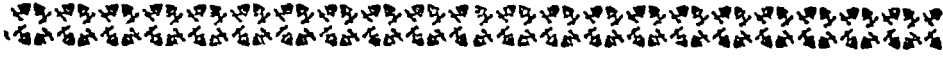
ंने तो पहले ही देखा, यह होगा सयम का जीवन
म होगी आतुरता पिय की, पल पल मे होगा परिवर्तन

ीण हुई तन मन से लिपटी यौवन की रेखा-जाली—
रु पथ पर पद चल हारे लघु आशा मे है हरियाली !

ार बार पूछो मत मुझसे, भव अंक न कभी टलेंगे—
ुख-सुख की गंगा-यमुना पानी के जीव छलेंगे !
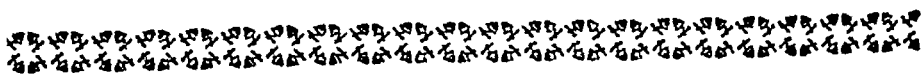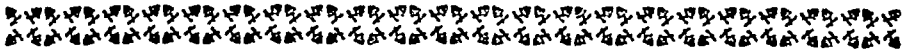
[३६]

यह कैसा री मधुर स्पर्श !
स्निग्ध, करुण, वह अथक हर्ष !

आज मन मे कैसा उल्लास ?
मुग्ध सी कम्पित सी अभिलाष——
नव किसलय मे नवल रास,
मुग्ध सृष्टि का अनुपम हास !

छिपे जाते घूँघट मे प्राण,
सिमटती अञ्चल मे क्यो लाज ?
शिथिल, अल्हड़ से सारे साज,
स्मृतियो का मीठा सा राज,

मन मे क्यो उठती मधुर मरोर ?
सजल होती नयनो की कोर——
तरल जीवन की मदिर हिलोर
आज मेरे सुहाग का भोर !

गृह मे बिखरे है शृगार,
स्वप्निल मेरा शैशव सा भार——
मुर्झाये पुष्पो का हार।
सजल उनमे छिपती मनुहार।

चिर वसन्त कुसुमित मधुमास
नारि-उर का मञ्जुल आभास !
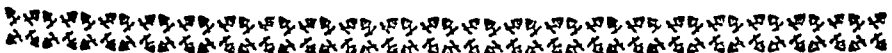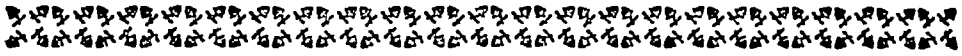
[३७]

बाँध दे किश्ती किनारा आ गया माँझी,

किनारा आ गया।

भूल सी मै भटकती, हर साँस मेरी अटकती थी,
पूजती थी पंथ सारे पर न पूजा छिटकती थी,
फूल मुर्झा ही गये पर मै न अञ्चल फटकती थी—
खोज अन्धी हो गई सहसा मिला जीवन सहारा—

आ गया माँझी किनारा आ गया !

कल्पना अभिसार लेकर रात में सोती नही थी,
नीद के अल्हड़ सुरों का राग संजोती नही थी,
पीर रस-भीने परो की गन्ध मे खोती नही थी—
क्षिति अरुण मे नाव डूबी पार तब किसने उतारा ?

आ गया माँझी किनारा आ गया !

कल्पना-तरु-शाख मूर्छित, मौन थे वरदान सारे,
चहकते थे पंछी आतुर, नीड़-स्वप्निल के सहारे,
अचल थी तूफान मे आँधी ऋतु वर्षा फुहारे,
ताप था अवशेष यौवन तब गिरी असि शस्त्र धारा

आ गया माँझी किनारा आ गया !
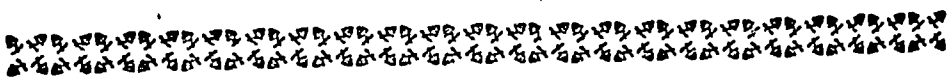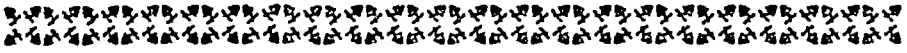
[४१]

कौन कहेगा तू मेरा ?

जग के अविरल नश्वर पल मे ढल जायेगी मेरी काया,
वासन्ती परिधान पहन कर उलझेगी तब किससे छाया,
सागर की फेनिल लहरो मे लय होकर ही जिसको पाया
पौ फटते ही रूठ गया क्यों मेरे पथ का वह उँजियारा
कौन कहेगा तू मेरा ?

यदि क्षणिक प्रेम के अनुभव से मै नन्हा नीड बनाऊँ,
सूर्य्य-ताप से झुलसे प्राणो को पृथ्वी पर ले आऊँ,
मृत्यु के घट-मृतिका मे जीवन का रस भर लाऊँ,
देखा था तब तक ही मैने अपना स्वप्न सुनहरा——
कौन कहेगा तू मेरा ?

प्रणय-केलि की प्रतिभ-प्रतीक्षा मे कल्पित मधु प्राण बहे
निष्फल आशा की पीडा के कितने ही सघात सहे
झंझा के सौरभ के जाने कितने चल निश्वास रहे
यौवन-पनघट का नीरव-तट तेरे स्वर ने आ घेरा
कौन कहेगा तू मेरा ?

साध के गोधूलि क्षण को जल उठा जब दीप मेरा
मेघ उमडी ऑख मे था खोजता अपना बसेरा
गन्ध-पुष्पों से घिरा अनुराग रञ्जित मृदु अँधेरा
शून्य-मन्दिर मे किसी ने आज ही विश्वास हेरा
कौन कहेगा तू मेरा ?
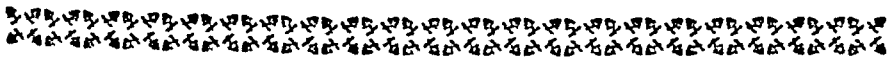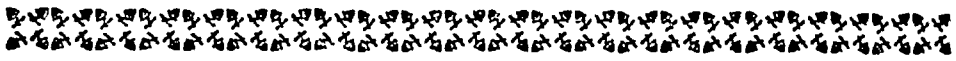
मै उनको कब लख पाई ?
द्वन्दों से छुट्टी पाई——
सब साथ करूँगी भर पाई ।
होने दो वृतियाँ स्थाई !!

वर माला मे कितना स्पन्दन ?
मेरे घूँघट मे नृत-कम्पन ,
मिलन का जीवन भी अवसन्न
लेकर मेरा ही शिशुपन !
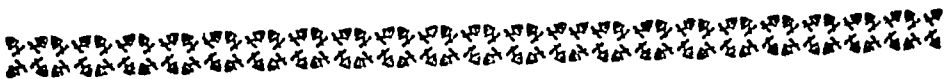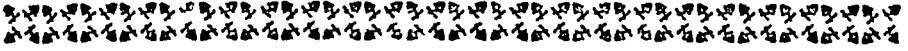
[४३]

अधरो पर प्याला था पर मैंने पीने से इनकार किया !
यौवन की चेतनता को मृत सपनो मे साकार किया !

घूँट गले की थी मेरी सहसा ही क्यो अवरोध हुआ ?
वज्र हृदय की पुष्टि थी मिलने पर ही प्रतिरोध हुआ !
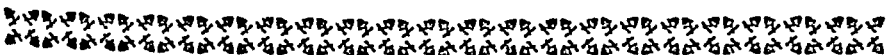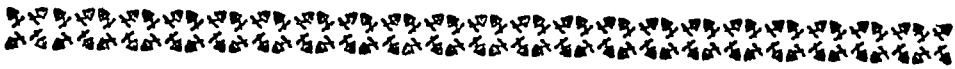
मत बनो तुम मीत मेरे !
प्राण जलते है निरन्तर,
साँस मे भी वेदना ज्वर,
चाँदनी के पूर में—
तरल से रणजीत मेरे!
मत बनो तुम मीत मेरे!

दुख में तन्द्रा मनोहर,
पुष्प-स्वप्नों मे ठहर कर,
षोड़सी के सान्ध्य-स्वर मे—
जी रहे है गीत मेरे!
मत बनो तुम मीत मेरे!

उचटती है नीद मन की,
रूठती शक्ती सहन की,
मद भरी प्यासी पलक मे—
रुक गये श्यामल सबेरे!
मत बनो तुम मीत मेरे!

आँधी मे यौवन उड़ता है
गह्वर रूप पथ से मुड़ता है
अर्चित पीड़ा की सुवास मे
कामना के जाल हेरे—
मत बनो तुम मीत मेरे!
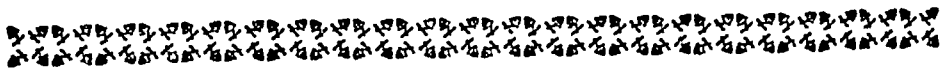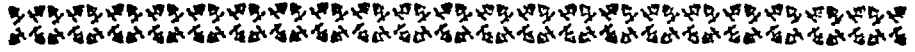
चुपचाप लौट जाती हूँ—
तेरा सौभाग्य चुराती हूँ !

तेरी श्वाँसे कितनी गहरी ?
धड़कन प्रिय हो जाती बहरी,
कुछ चुभती सी बाते कह री !
जगे शाश्वत सोया प्रहरी !

जाती हूँ रुक जाती हूँ—
तेरा सौभाग्य चुराती हूँ !

राह नही पर आती हूँ—
तेरा सौभाग्य चुराती हूँ !

[४२]

उस प्रसूतिका-गृह में
मन्द मन्द जलती थी बाती,
आसन्न-प्रसव माँ की पीडा
में भी उसका सुख संघाती !

अरुण-शिखा सम उसकी आशा
पल पल मे बढती थी।
निज स्पन्दन मे नन्हे
उर का स्पन्दन मधु सुनती थी !

खुली आँख जब उसकी
नव-पुष्पों की ढेरी देखी।
शेष-किरण सी उज्वल--
नारी की प्रतिकृति देखी !

चुम्बन की साकार चेतना--
मधुर मदिर वह रोती थी !
माँ के स्तब्ध नयन-पृष्ठो पर
रूप-रश्मि सी खोती थी।

[४६]

कितने ही धीरे आओ
नही मुझसे छिप पाओगे--
अन्तर मे प्रतिपल होती
पद् ध्वनि ही सुन पाओगे !

मेरी आँखे मत मूँदो,
खुद बन्दी हो जाओगे,
सान्ध्य-प्रभा के अश्रु
तब कैसे लख पाओगे ?

मत पूछो मैने निशि के
स्वप्नो को कैसे साधा ?
प्रिय समझ कहाँ पाओगे ?
मेरी ममता की बाधा !

मर्माहत दु:ख का प्याला
मधु मुझको ही पीने दो
तुम मुक्त रहो दुबिधा से
मेरी दुबिधा जीने दो !
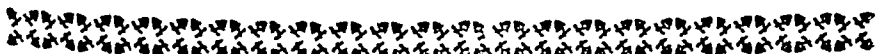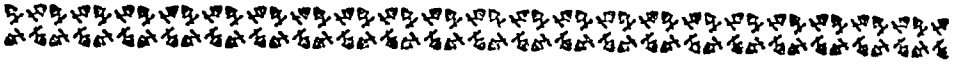
[४४]

राह नही पर आती हूँ,
तेरा सौभाग्य चुराती हूँ !

मैं कहती मुझको माफ़ न कर,
पानी बहने दे भाँफ न कर,
धुँधला सा पथ साफ न कर—
पापों का यह इन्साफ न कर !

उलझी घड़ियों मे आती हूँ
निखरा सौभाग्य चुराती हूँ ?

मधुकक्ष तेरा कितना सुन्दर !
रस-प्रलय-सिन्धु वे मधुराधर,
आतंक दूर स्वप्नो का घर,
निखरी सन्ध्या पौरुष प्रखर !

छाया से घबराती हूँ—
तेरा सौभाग्य चुराती हूँ !

वह मौन मिलन प्राणों का,
संसृति का महा समर्पण,
साकार - चेतना - तट पर—
मेरे यौवन का तर्पण !
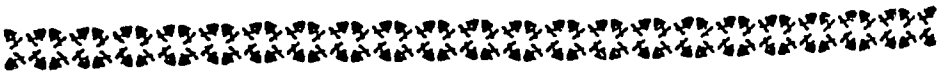
[४८]

तेरी नयन-निधि मे प्रियतम
मेरे जी का मधु सञ्चित,
पी न सकूँगी कितनी भारी—
घूँट, प्राण मेरे अर्चित!

मैने कब देखी जीवन-धन,
गुप्त-प्रणय की पीड व्यथा।
भोली हूँ अनभिज्ञ विश्व से;
कैसे समझूँ मर्म-कथा?

मै अपनेपन मे भूली थी,
पर तुमने कण कण मे खोजा,
काल टूटता था सर पर—
सहसा ही थाम लिया बोझा!

भव अतीत की तरल रश्मियाँ
मुझको आज रुलाती क्यों?
इस परिवर्तन की पीडा को—
बार बार सुहलाती क्यों?

[४५]

क्यो बार बार आती है
स्मृति मुझको तव आनन की !
स्वर्ग झलक जाता है,
झाँकी मे तेरे मन की !

मेरा जीवन विष-गागर
रस-बिन्दु उसी का तू है,
कटुता है सारे जग मे
तू लक्षित मीठा क्यो है ?

घन अन्धकार मे भी तू—
मेरी आशा का इन्दु,
मै नाप सकूँगी कैसे ?
तेरी महिमा का सिन्धु ?

यो कब तक प्राण जियेगे।
तू ही है उनका स्पन्दन—
चेतनता लय हो जाती
हत सज्ञ व्यथा मे तडपन !

अच्छा होगा अब भी तू
अतिशय मुझको पहिचाने
तेरी अनुपस्थिति में—
प्रतिमा को तन्मय जाने !

[५०]

काया के इस वन्दीगृह मे
कब तक करूँ प्रतीक्षा तेरी ?
तडप तड़प कर प्रीति बावरी--
बन जाती आँसू की ढेरी।

बाँधा तुमने मुझको निष्ठुर
क्यो फूलो की जञ्जीरो से ?
गा, गा, कर तुमने बेधा
मुझको किन प्रणय मञ्जीरो से ?

असफलता की इस बेला पर,
कब तक खडी रहे नौका ?
था कल्पित चन्द्रोदय मेरा
क्यो जीवन-निशि को रोका ?

उलझ गये तुम मुझे उठा कर,
किस ममता के घूँघट मे ?
बिखर पडी सिमटी इच्छाएँ--
प्रणयी के कोमल हठ मे !

मृत्यु के पहिले यदि आओ
तो न विवश सज्ञा होगी,
परिमाण खुली आँखो मे ही
चेतनता, युग, प्रज्ञा होगी--!

[४७]

निठुर कब तक यह चलेगी प्रेम परीक्षा,
हो रही पल पल प्रलय कौमार्य की दिक्षा
बीच पथ मे माँगते अंचल पकड़ भिक्षा
प्रतिकूलता मे प्राण है प्रमत्त प्रतीक्षा।

क्यों किया अनुरोध इतने प्यार निमत्रण--
जागते निष्फल हमारी विकलता के क्षण!
हँसी प्रारब्ध घूँघट मे कृति का पुन आकर्षण,
सहानुभूति के स्वरो मे पाप का नर्तन।

चिर मिलन के बाद भी अलगाव परस्पर,
सो रहा ससार जगता कामना का ज्वर,
तड़पती सत्ता पराये हाथ मन उर्वर--
अनिवार्य अभिनय की कठिनता मौन मेरा उर!

अनुमान था हम एक है अनन्त जीवन से।
शुष्क हो जाती हरितिमा अधिक सिञ्चन से,
मै न थी उत्सुक हुए पर तुम अकिञ्चन से,
फूटता दु:ख मिलन के ही प्रथम क्षण से!
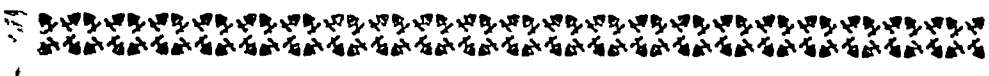
अब तक करती रही प्रतीक्षा,
अपनेपन की हुई समीक्षा,
कुण्ठित है शब्दो मे शिक्षा,
अन्तर मे होती बरसात।
तू पार हुआ अपनी मञ्जिल
मुझको रस्ते मे हुई रात।

दीपक नभ मे छिपे हुए है
गाने के स्वर झिपे हुए है,
नयन वारिधि से दिपे हुए है,
बँधा हुआ सूर्योदय प्रात,
तू पार हुआ अपनी मञ्जिल
मुझको रस्ते मे हुई रात!

[४९]
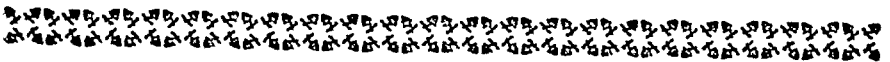
विश्व-हृदय का क्षीण सरित
बन आशा ज्वार उमड आई ,
अरमानो की बदली हूँ
मै तेरे अम्बर पर छाई !

कलुष-कालिमा दुनिया की सह
तेरा सुख बनने आई ,
प्रेम समर्पण प्राणो का—
द्वन्दो से कब छुट्टी पाई ?

[५१]

तू पार हुआ अपनी मञ्जिल
मुझको रस्ते मे हुई रात!

भारी पग, पायल भारी,
अभिसार अन्ध कृष्णा कारी,
बरस चुकी कब उजियारी
भ्रम हुआ किसी का इङ्गित हात!
तू पार हुआ अपनी मञ्जिल
मुझको रस्ते मे हुई रात!

पिय आराधन का अन्तिम क्षण,
पहुँच न पाऊँ तो दुर लक्षण,
पूरा होते ही जीवन, ऋण,
सुरभि बिखेरेगे जलजात!
तू पार हुआ भव की मञ्जिल
मुझको रस्ते मे हुई रात!

पाप, पुन्य सघर्षो का घट
और खुला भावी का घूँघट,
परिचित हूँ फिर भी दुख का हट—
छूटा है प्रियजन का साथ!
तू पार हुआ अपनी मञ्जिल
मुझको रस्ते मे हुई रात!